इकाई 4 बालगंगाधर तिलक

इकाई की संरचना

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 बालगंगाधर तिलक का संक्षिप्त परिचय

4.3 प्रमुख रचनायें

4.4 प्रमुख ज्योतिषीय सिद्धान्त

4.5 सारांश

4.6 शब्दावली

4.7 अभ्यास प्रश्न

4.8 उपयोगी पुस्तकें

4.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप :

- बालगंगाधर तिलक के व्यक्तित्व को प्रतिपादित करने में समर्थ होंगे।
- बालगंगाधर तिलक की प्रमुख रचनाओं से सुपरिचित होंगे।
- बालगंगाधर तिलक के ज्योतिषीय सिद्धान्तों को विवेचित कर सकेंगे।
- ओरायन के अर्थ को व्याख्यायित करने में कुशल होंगे।
- बालगंगाधर तिलक द्वारा प्रतिपादित वेदकाल को बताने में दक्ष होंगे।

4.1 प्रस्तावना

बालगंगाधर तिलक जी भारतीय स्वतंत्रता के जनक माने जाते हैं। बहुमुखी प्रतिभा के धनी तिलक एक समाज सुधारक, स्वतंत्रता सेनानी, राष्ट्र भक्त और राष्ट्रीय नेता के साथ-साथ भारतीय इतिहास,संस्कृत, हिन्दू धर्म, ज्योतिष, गणित एवं खगोल विज्ञान जैसे विषयों के प्रकाण्ड विद्वान् थे। प्रस्तुत इकाई में आप बालगंगाधर तिलक जी का संक्षिप्त जीवन परिचय, उनकी प्रसिद्ध रचनायें और प्रमुख ज्योतिषीय सिद्धान्तों का अध्ययन करेंगे।

4.2 बालगंगाधर का संक्षिप्त परिचय

बाल गंगाधर तिलक का जन्म महाराष्ट्र के कोंकण प्रदेश (रत्नागिरि) के चिक्कन गांव में 23 जुलाई 1856 को हुआ था। इनके पिता गंगाधर रामचंद्र तिलक एक धर्मनिष्ठ ब्राह्मण थे। अपने परिश्रम के बल पर शाला के मेधावी छात्रों में बाल गंगाधर तिलक की गिनती होती थी। वे पढ़ने के साथ-साथ प्रतिदिन नियमित रूप से व्यायाम भी करते थे, अतः उनका शरीर स्वस्थ

और पुष्ट था। सन् 1879 में उन्होंने बी.ए. तथा कानून की परीक्षा उत्तीर्ण की। घरवाले और उनके मित्र तथा संबंधी यह आशा कर रहे थे कि तिलक वकालत कर धन कमाएंगे और वंश के गौरव को बढ़ाएंगे, परंतु तिलक ने प्रारंभ से ही जनता की सेवा का व्रत धारण कर लिया था। परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद उन्होंने अपनी सेवाएं पूर्ण रूप से एक शिक्षण संस्था के निर्माण को दे दीं। सन् 1880 में न्यू इंग्लिश स्कूल और कुछ साल बाद फर्ग्युसन कॉलेज की स्थापना की। वे हिन्दुस्तान के एक प्रमुख नेता, समाज सुधारक और स्वतंत्रता सेनानी थे। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के पहले लोकप्रिय नेता थे। इन्होंने सबसे पहले ब्रिटिश राज के दौरान पूर्ण स्वराज की मांग उठाई। तिलक का यह कथन कि **'स्वराज मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है और मैं इसे लेकर रहूंगा'** बहुत प्रसिद्ध हुआ। लोग उन्हें आदर से **'लोकमान्य'** नाम से पुकार कर सम्मानित करते थे। उन्हें हिन्दू राष्ट्रवाद का पिता भी कहा जाता है। लोकमान्य तिलक ने जनजागृति का कार्यक्रम पूरा करने के लिए महाराष्ट्र में गणेश उत्सव तथा शिवाजी उत्सव सप्ताह भर मनाना प्रारंभ किया। इन त्योहारों के माध्यम से जनता में देश प्रेम और अंगरेजों के अन्यायों के विरुद्ध संघर्ष का साहस भरा गया। तिलक के क्रांतिकारी कदमों से अंगरेज बौखला गए और उन पर राष्ट्रद्रोह का मुकदमा चलाकर छ: साल के लिए 'देश निकाला' का दंड दिया और बर्मा की मांडले जेल भेज दिया गया। इस अवधि में तिलक ने गीता का अध्ययन किया और गीता रहस्य नामक भाष्य भी लिखा। तिलक के जेल से छूटने के बाद जब उनका गीता रहस्य प्रकाशित हुआ तो उसका प्रचार-प्रसार आंधी-तूफान की तरह बढ़ा और जनमानस उससे अत्यधिक आंदोलित हुआ। तिलक जी समाज सेवी के साथ-साथ अच्छे विद्वान् लेखक भी थे। उन्होंने अनेक ग्रंथों की रचना की।

4.3 प्रमुख रचनायें

लोकमान्य तिलक ने यूँ तो अनेक पुस्तकें लिखीं किन्तु श्रीमद्भगवद्गीता की व्याख्या को लेकर मांडले जेल में लिखी गयी गीता-रहस्य सर्वोत्कृष्ट है जिसका कई भाषाओं में अनुवाद हुआ है।

उनकी लिखी हुई सभी पुस्तकों का विवरण इस प्रकार -

- 'द ओरिओन' (The Orion)।
- द आर्कटिक होम ऑफ द वेदाज (The Arctic Home in the Vedas, (1903)।
- श्रीमद्भगवद्गीता रहस्य (माण्डले जेल में)।
- The Hindu philosophy of life, ethics and religion (१८८७ में प्रकाशित)।
- Vedic Chronology & Vedang Jyotish (वेदों का काल और वेदांग ज्योतिष)।
- टिळक पंचांग पद्धती (इसका कुछ स्थानों पर उपयोग होता है, विशेषतः कोकण, पश्चिम महाराष्ट्र आदि)।
- श्यामजी कृष्ण वर्मा एवं अन्य को लिखे लोकमान्य तिलक के पत्र (एम. डी. विद्वांस यांनी संपादित)।
- Selected documents of Lokamanya Bal Gangadhar Tilak, 1880-1920, (रवीन्द्र कुमार द्वारा संपादित)

उनकी समस्त पुस्तकें मराठी अँग्रेजी और हिन्दी में लोकमान्य तिलक मन्दिर, नारायण

पैठ, पुणे से सर्वप्रथम प्रकाशित हुई। बाद में उन्हें अन्य प्रकाशकों ने भी छापा।

4.4 प्रमुख ज्योतिषीय सिद्धान्त

क्या खगोलीय उल्लेखों/ संकेतों का इस्तेमाल प्राचीन रचनाओं की तारीखें जानने के लिए किया जा सकता है ? लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक ने अपने लेख **'द ओरायन'** में एक अनोखा प्रयोग लिखा था जो संक्षेप में कुछ इस प्रकार था। तिलक वैसे तो एक स्वतंत्रता सेनानी के रूप में ज्यादा प्रसिद्ध हैं मगर वो संस्कृत के विद्वान भी थे और उन्हें गणित और खगोलशास्त्र में विशेष रुचि थी। जब वे गीता का भाष्य (गीता रहस्य) लिख रहे थे तो एक छंद ने उन्हें सोच में डाल दिया।

गीता के दसवें भाग में भगवान् श्रीकृष्ण अपनी तुलना प्रकृति की सभी श्रेष्ठ सजीव और निर्जीव चीजों से करते हैं। मगर तिलक का ध्यान जिस एक वाक्य ने अपनी ओर खींचा वो कुछ इस प्रकार था।

"मासानाम मार्गशीर्षोऽहम् ऋतूनां कुसुमाकरः"

अर्थात्,महीनों में वो **'मार्गशीर्ष'** हैं। जबकि ऋतुओं में **'बसन्त'**।

यहां सोचने की बात यह थी कि वर्तमान हिन्दू पंचांग के अनुसार 'मार्गशीर्ष' महीना, जिसकी पहचान **'मृगशिरस' (Orion)** तारामन्डल से होती है, बसन्त ऋतु में नहीं बल्कि शरद ऋतु में आता है। तो ऐसी विसंगति क्यों? क्यों नहीं सबसे अच्छा महीना सबसे अच्छी ऋतु का होता है? इसका विश्लेषण करते समय तिलक का मानना था कि उक्त वर्णन,उस युग में जिसमें यह बात कही गई थी,सही रहा होगा। क्योंकि विषुव के घूमने (Precession Of Equinoxes) के कारण उस वक्त वर्ष का पहला महीना 'मार्गशीर्ष' था लेकिन अब ऐसा नहीं है। अपने शोध को आगे बढ़ाते हुए तिलक ने वेदों में ऋतुओं और तारामंडलों के उल्लेखों को ढूंढा और उनकी विसंगति को समझने के लिए तर्क दिया कि हमें विषुव के घूमने का अनुमान लगाना पड़ेगा। और इस खगोलीय जानकारी के आधार पर हम उस युग का अनुमान लगा सकते हैं जब वेदों में इनका उल्लेख किया गया होगा। मगर यदि हम तिलक की इन गणनाओं को मानें तो वेदों तथा आर्यों का आरंभिक काल 6000 ई. पू. तक पहुंच जाता है। बहुत से विद्वान् तिलक की इन गणनाओं से सहमत नहीं हैं। उनका मानना है कि ये गणनाएं वेदों को उनके समय से, जो साहित्यिक विकास, इतिहास और नृशास्त्र के आधार पर तय किए गए हैं, काफी पीछे ले जाती हैं। हालांकि खगोलीय गणनाओं के अनुसार तिलक के तरीके में कोई खामी नहीं है। अगर इनमें कोई कमी है तो वो यह कि वे खगोलीय उल्लेख जिन पर यह सिद्धांत आधारित है कितने स्पष्ट हैं; जैसा कि हम जानते हैं कि वेदों की भाषा बहुत आसान या स्पष्ट नहीं है। **ओरायन यानी मृगशिरस तारामन्डल** आसमान में काफी आसानी से पहचाना जा सकने वाला तारामन्डल। साधारण कैमरे से ली गई तस्वीर में इस तारामन्डल के प्रमुख तारे दिखाई देते हैं। उपरोक्त उदाहरण इतिहास, साहित्य और खगोल शास्त्र के मिले-जुले प्रयास की ओर इशारा है। कुछ दूसरे खगोलीय सन्दर्भ भी हो सकते हैं जैसे, ग्रहण, ग्रहों के परिप्रेक्ष्य में कुछ खास नक्षत्रों का उदय या अस्त होना, धूमकेतुओं का आगमन आदि। इनके अलावा ग्रहों की गति भी समय की अच्छी जानकारी दे सकती है। आज नए-नए कम्प्यूटर प्रोग्रामों की बदौलत इनकी गति काफी शुद्धता से नापी जा सकती है। हेली धूमकेतु जैसे कुछ मशहूर धमूकेतुओं को भी काल निर्धारण में इस्तेमाल किया जा सकता है। इस तरह अगर साहित्यिक रचनाओं में

वर्णित खगोलीय दृश्यों की सत्यता स्थापित की जा सके कि ये उसी काल के हैं जिस समय इन साहित्यिक रचनाओं का संकलन हुआ था, और इन्हें बाद में नहीं जोड़ा गया है तो खगोलशास्त्र इनके काल निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है । बाल गंगाधर तिलक की लोक मान्यता उनके राजनीतिक व सामाजिक कार्यों के कारण ही नहीं अपितु वैज्ञानिक शोध-वृत्ति के कारण भी थी । अपनी इसी शोध-वृत्ति के चलते उन्होंने ओरायन जैसा ग्रन्थ लिखा । ओरायन, मृगशीर्ष/ मृगशिरा नक्षत्र का ग्रीक नाम है । ग्रन्थ का पूर्ण नाम 'ओरायन या वैदिक प्राचीनता की खोज' है । इसके लेखन की प्रेरणा लेखक को गीता के श्लोकार्ध- 'महीनों में मैं मार्गशीर्ष व ऋतुओं में बसन्त हूँ' (गीता, 10-35) से मिली । लेखक ने भाषाशास्त्र, शब्दव्युत्पत्ति, वैदिक कथानकों के अतिरिक्त गणितीय आधार से दर्शाया कि ग्रीक, फारसी व भारतीय आर्यों का एक ही मूल स्थान था, जहाँ से वे स्वदेशों में गए । ओरायन (मृगशीर्ष, मृगशिरा) नक्षत्र के साथ जुड़ी ग्रीक, पारसी व भारतीय कथाओं का अद्भुत साम्य, तीनों जातियों के एक ही मूल स्थान का प्रमाण है । इससे जुड़ी ग्रीक कथा यह है कि ओरायन एक शिकारी व योद्धा था, जो किसी कारण मारा गया । उसका सिर, मृग के सिर के रूप में, मृगशीर्ष नक्षत्र है । पास ही शिकारी के दो 'श्वान' तारों की आकृति में हैं ।एक रेखा में तीन तारे, शिकारी का कमरपट्टा है । उपनयन संस्कार में भी ग्रीक, पारसी व भारतीय आर्यों में परंपरा साम्य है । तिलक कहते हैं कि यज्ञोपवीत में वीत का अर्थ बुना हुआ वस्त्र है । यह तीनों प्रकार के आर्य कमर में लपेटकर रखते थे । पारसियों में भी यज्ञोपवीत संस्कार होता है । तिलक के अनुसार जनेऊ का प्रचलन काफी बाद में आया, संभवत: जनेऊ के तीन धागे, मेखला की तरह तीन सोम-गाँठों को बताते हैं । **'ओरायन'** ग्रीक शब्द का मूल संस्कृत में है । मृग में वसंत बिंदु से वर्षारंभ होता है, अतः इसे अग्रहायन, अग्रायन यानी पथारंभ कहा है । **'ग'** के लोप से यह अग्रायन, ओरायन बनता है । इसी तरह पारसी शब्द, पौरयानी है, जो **'प'** लोप करके, ओरायन बनता है । अग्रहायन, अग्रायन का अपभ्रंश 'अगहन' है जो मार्गशीर्ष मास में किसी समय, वर्षारंभ का प्रतीक है । पूरे ग्रन्थ में तिलक ने वैज्ञानिक तटस्थता से सत्य खोजा है । उन्होंने प्रस्तावना में कहा है कि उनकी मान्यताएँ अंतिम नहीं हैं । इसी ग्रन्थ से उन्होंने वेदों की प्राचीनता के साथ उनसे जुड़े उपनिषद, संहिता, ब्राह्मण आदि ग्रंथों के काल को 6000 से 500 ई.पू. तक के चार कालखंडों में बाँटा । 185 पृष्ठों का यह ग्रन्थ दीर्घ निबन्ध के रूप में लंदन में 1892 ई. में आयोजित नवम प्राच्याविधा परिषद् में प्रस्तुत था, परंतु बड़े आकार के कारण संक्षेपित शोध-पत्र के रूप में प्रस्तुत हुआ । इससे पाश्चात्य विद्वानों ने माना कि लीक से हटकर लेखक ने सोचा व स्वतंत्र निर्णयात्मक व विवेचनात्मक प्रतिभा का परिचय दिया जो 'बाबावाक्यं प्रमाणम्' सोच के ठीक विरुद्ध है । मात्र 35 वर्ष की आयु में लिखे इस ग्रन्थ का स्तर, शोध उपाधि के अनंतर की उपाधि (पोस्ट डॉक्टोरल) के स्तर का है।तिलक को इस ग्रन्थ पर डी.एससी/डी. लिट् उपाधि मिल सकती थी । ओरायन का अचानक राजकीय लाभ तिलक को मिला । जर्मन विद्वान् मैक्समूलर ओरायन से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने तिलक के लिए मध्यस्थता करते हुए उन्हें जेल से मुक्ति दिलाई । वैसे उनके विरुद्ध कोई दृढ़ प्रमाण भी नहीं थे । बाल गंगाधर तिलक ने ज्योतिष को आधार बनाकर वेदों का काल निर्धारण किया था ।

तिलक का वैदिक काल का विभाजन

वैदिक काल को चार भागों में विभक्त किया था । अदिति काल , मृगशिरा काल, कृत्तिका काल एवं अन्तिम काल । तिलक मृगशिरा काल को आर्य सभ्यता के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण मानते हैं । तिलक के मत में षड्दर्शन सूत्रों की रचना अंतिम काल में हुई थी । वेदांग ज्योतिष

की रचना कृत्तिका काल में हुई। एवं बौद्ध धर्म का उद्भव अंतिम काल में मानते हैं।

1- **अदिति काल** - 6000 ई पूर्व से- 4000 ई. पूर्व।

2- **मृगशिरा काल** 4000 ईसा पूर्व से 2500 ई. पूर्व तक।

3- **कृतिका काल** - 2500 ई. पूर्व से 1400 ई. पूर्व तक।

4- **अंतिम काल** - 1400 ई पूर्व से 500 ई पूर्व तक।

लोकमान्य तिलक ने orion के पश्चात लिखे गये ग्रन्थ article home in the Vedas मे वेद काल को 10000 ई. पूर्व बताया है।

- तिलक जी अपना सारा समय हलके फुलके लेखन में लगाने वाले व्यक्ति नहीं थे। उन्होंने अपने खाली समय का उपयोग अच्छे कार्य में लगाने का संकल्प लेकर उसे अपनी पसंदीदा पुस्तकों श्रीमद्भगवद्गीता और ऋग्वेद के पठन-पाठन में लगाया। वेदों के काल निर्धारण से संबंधित अपने अनुसन्धान के परिणामस्वरूप उन्होंने वेदों की प्राचीनता पर एक निबन्ध लिखा। जो ज्योतिषीय गणना पर आधारित था। उन्होंने इस निबन्ध का सारांश इंटरनेशनल कांग्रेस ऑफ ओरिएंटलिस्ट के पास भेजा जो सन् 1892 ई. में लंदन में हुई थी। अगले वर्ष उन्होंने इस पूरे निबन्ध को पुस्तकाकार में **दि ओरियन** या **दि रिसर्च इनटू द एंटिक्विटी ऑफ द वेदाज** शीर्षक के अंतर्गत प्रकाशित किया। उन्होंने इस पुस्तक में ओरिऑन की ग्रीक परम्परा और नक्षत्रपुञ्ज के संस्कृत अर्थ **अग्रायण** या **अग्राहयण** के बीच सम्बन्ध को ढूँढा है। क्योंकि **अग्रहायण** शब्द का अर्थ **वर्ष का प्रारंभ है**, वे इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि ऋग्वेद के सभी स्रोत जिनमें इस शब्द का संदर्भ है या इसके साथ जो भी विभिन्न परंपराएँ जुड़ी थीं, की रचना ग्रीक लोगों के हिंदुओं से पृथक् होने से पूर्व की गई होगी। यह वह समय रहा होगा, जब वर्ष का प्रारंभ सूर्य के ओरियन या मृगशिरा नक्षत्र पुंज में रहते समय अर्थात् ईसा से 4000 वर्ष पहले हुआ होगा। इस पुस्तक की प्रशंसा यूरोप और अमेरिकी विद्वानों ने की। अब यह कहा जा सकता है कि तिलक के निष्कर्षों को लगभग सभी ने स्वीकार कर लिया है। अनेक प्राच्यविदों, जैसे कि मैक्समूलर,वेबर, जेकोबी, और विटने ने लेखक की विद्वता और मौलिकता को स्वीकार किया है। पुस्तक के प्रकाशन के बाद तिलक ने कुछ समय तक प्रोफेसर मैक्समुलर और वेबर के साथ पुस्तक में उठाए गए कुछ भाषा विज्ञानीय प्रश्नों पर दोस्ताना पत्र व्यवहार किया। इसके परिणामस्वरूप दोनों पक्ष इस बात पर सहमत हुए कि इस विषय के पक्ष और विपक्ष में बहुत कुछ कहा जा सकता है।जिस समय बॉन में याकोबी ने ज्योतिष सम्बन्धी तथ्यों के आधार पर ऋग्वेद का रचनाकाल 4500 ई॰पू॰ निर्धारित किया उसी समय भारत में ज्योतिष-सम्बन्धी तथ्यों के ही आधार पर स्वतन्त्र रूप से कार्य करते हुए बालगंगाधर तिलक भी उसी निष्कर्ष पर पहुँचे। दोनों में अन्तर यह था कि तिलक ने वैदिक साहित्य से अनेक ऐसे भी प्रमाण उद्धृत किये जिनसे वेद मन्त्रों का रचना काल दो हज़ार वर्ष और पूर्व सिद्ध होता है। तिलक के अनुसार वैदिक याज्ञिक साहित्य के अवलोकन से यह बात स्पष्ट रूप से मालूम होती है कि जिस प्रकार ऋतुओं के साथ वर्ष या सत्र के प्रारम्भ का सम्बन्ध माना जाता था उसी प्रकार नक्षत्रों के साथ भी वर्ष या सत्र के प्रारम्भ का सम्बन्ध माना जाता था। जिस नक्षत्र से वर्ष का प्रारम्भ वैदिक साहित्य में मिलता है, उससे यह बात पुष्ट होती है कि वसन्त-सम्पात से ही वर्ष या उत्तरायण का प्रारम्भ होता था। सम्पात या संक्रान्ति हमेशा एक ही नक्षत्र पर नहीं होते। जिस नक्षत्र में

एक समय सम्पात पड़ेगा कई सौ वर्ष बाद वह उसी नक्षत्र में नहीं पड़ेगा। इस असंगति को दर करने के लिये समय-समय पर वैदिक ज्योतिष-वैज्ञानिकों के द्वारा सुधार किये जाते रहे । तिलक के अनुसार प्राचीन कैलेण्डर में तीन परिवर्तनों के प्रमाण वैदिक वाङमय में मिलते हैं एक समय कृत्तिका नक्षत्र में :, एक समय मृगशिरा नक्षत्र में तथा एक समय पुनर्वसु नक्षत्र में वसन्तसम्पात पड़ता था। जिस समय कृत्रिका-, वसन्तसम्पात-, उत्तरायण तथा वर्ष का प्रारम्भ एक साथ था वह समय 2500 ई॰पू॰ का है। कृत्तिका से एक नक्षत्र पूर्व अर्थात भरणी नक्षत्र के 10° में वसन्तसम्पात को उल्लेख- वेदांग ज्योतिष में मिलता है। यह समय 1400 ई॰ पू॰ का है। इस प्रकार 2500 ई॰ पू॰ से 1400 ई॰ पू॰ तक के काल को तिलक ने कृत्तिकाकाल की संज्ञा दी । इसी समय तैत्तिरीयसंहिता तथा अनेक - ब्राह्मणों की रचना हुई। इस समय तक ऋग्वेद के सूक्त प्राचीन और अस्पष्ट हो चुके थे। यह वह काल था जिसमें सम्भवतके रूप में वेदों की संहिताओं का व्यवस्थित रूप से ग्रन्थ : संकलन हुआ और प्राचीनतम सूक्तों के अर्थबोध की दिशा में भी प्रयत्न हुए। इसी समय भारतीयों का चीनियों के साथ सम्पर्क हुआ और चीनियों ने उनकी नक्षत्रविद्या ग्रहण की।

- जिस समय मृगशिरा नक्षत्र, वसन्तसम्पात-, उत्तरायण तथा वर्ष का प्रारम्भ एक साथ था वह समय 4500 ई॰पू॰ का है। कृत्तिका काल से पूर्व अर्थात 2500 ई॰पू॰ से लेकर 4500 ई॰ पू॰ के काल को तिलक ने मृगशिराकाल की संज्ञा दी। आर्य सम्भ्यता के इतिहास में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण काल यही है। ऋग्वेद के अधिकांश सूक्तों की रचना इसी समय हुई। अनेक नये आख्यानों तथा प्राचीन आख्यानों के नये रूपों का विकास भी इसी समय हुआ। इस काल में आर्य, ग्रीक, तथा पारसी एक साथ निवास करते थे। इसके अन्तिक काल में वे एक दूसरे से अलग हुए ।
- ऋग्वैदिक मन्त्रों के रचनाकाल की 4500 ई॰ पू॰ तक की अवधि याकोबी ने भी निर्धारित की थी। किन्तु वह उससे पीछे नहीं जा सका। तिलक ने वैदिक साहित्य में कई ऐसे उद्धरण खोज निकाले जिसमें वसन्तसम्पात-, उत्तरायण तथा वर्ष के आरम्भ का पुनर्वसु नक्षत्र में होने का संकेत मिलता है। तिलक ने देखा कि तैतरीय संहिता तथा तांडय ब्राह्मण में जहां फाल्गुनी पूर्णमास से वर्ष के प्रारम्भ होने का उल्लेख किया गया है वहां चित्रा पूर्णमास से भी वर्ष के प्रारम्भ होने की बात कही गई है । **चित्रापूर्णमासे दीक्षेरन् मुखं वा एतत्संवत्सरस्य यच्चित्रा पूर्णमासो मुखत एवं संवत्सरमारम्य दीक्षन्ते ।**
- तिलक के अनुसार तैतरीय संहिता में जिस वर्ष के प्रारम्भ होने का उल्लेख किया गया है वह वस्तुतः पुनर्वसु नक्षत्र से शुरू होता था । उसी दिन वसन्त-संपात भी होता था । पुनर्वसु नक्षत्र, वसन्त-संपात और वर्ष का प्रारम्भ तीनों की एक स्थिति थी, इसके समर्थन में तिलक ने कई प्रमाण दिये हैं । पुनर्वसु को नक्षत्रों में प्रथम स्थान प्रदान करने की सूची यद्यपि वैदिक साहित्य में नहीं मिलती और न आग्रहायण जैसा उसका कोई पर्यायवाची शब्द ही मिलता है तथापि याज्ञिक साहित्य में पुनर्वसु को नक्षत्रों में प्रथम स्थानीय मानने के संकेत मिलते हैं । पुनर्वसु नक्षत्र के अधिष्ठात्री देवता अदिति हैं ।

4.5 सारांश

तिलक ने वैदिक काल को चार भागों में विभक्त किया था । अदिति काल , मृगशिरा काल, कृत्तिका काल एवं अंतिम काल । ऋग्वेद में अदिति को देवयान को पितृयान से अलग करने

वाली और देवमाता कहा गया है। तिलक के अनुसार ये सारे उल्लेख अदिति से वर्ष के प्रारम्भ होने का कथन करते हैं। अदिति से वर्ष के प्रारम्भ मानने का मतलब है पुनर्वसु से वर्ष का प्रारम्भ मानना । इस प्रकार जिस समय अदिति से यज्ञ का प्रारम्भ होता था, उस समय पुनर्वसु नक्षत्र मृगशिरा से दो नक्षत्र बाद में पड़ती है । बसन्त सम्पात को मृगशिरा से सरककर हटने में लगभग 2000 वर्ष लगे होंगे । इस प्रकार तिलक के अनुसार यह समय 4000+2000= 6000 ई॰ पू॰ का है।

आर्यसभ्यता का यही प्राचीनतम काल है । 4000 ई॰ पू॰ से 6000 ई॰ पू॰ के समय को तिलक ने अदितिकाल की संज्ञा दी । यह वह समय है जबकि अलंकृत ऋचाओं तथा सूक्तों की सत्ता नहीं थी । गद्य -पद्य-उभयात्मक यज्ञपरक मन्त्रों की सत्ता इस काल की है । ग्रीक तथा पारसियों के पास इस काल की कोई परम्परा सुरक्षित नहीं । भारतीय परम्परा अत्यन्त समृद्ध और प्राचीनतम है । तिलक के महत्वपूर्ण अन्वेषण से यह सिद्ध होता है कि ऋग्वेद में चित्रित परम्परायें विशुद्ध रूप से उस समयावधि कि ओर संकेत करती है जो किसी रूप में 4000 ईसा पूर्व से उत्तरकालीन नहीं है । जब विषुवत् मृगशिरा (ओरियन) में था अथवा अन्य शब्दों में जब श्वान् नक्षत्र जैसा कि हम ऋग्वेद में पाते हैं, विषुवतीय वर्ष प्रारम्भ करते थे ।

इस निष्कर्ष के समर्थन में अनेक वैदिक पाठ्य एवं पौराणिक अवतरणों को उद्धृत किए गए हैं । उनकी तार्किक और बौद्धिक व्याख्या तिलक के द्वारा की गई ।

4.6 शब्दावली

वेद – वेद शब्द संस्कृत के **विद् ज्ञाने** धातु से बना है । जिसका शाब्दिक अर्थ 'ज्ञान' है। वेद चार हैं – ऋग्वेद,यजुर्वेद,सामवेद और अथर्ववेद । वेदों को अपौरुषेय माना जाता है ।

अग्रहायण – अगहन का महीना । इसे मार्गशीर्ष मास भी कहते हैं ।

विषुव – विषुव शब्द संस्कृत भाषा से लिया गया है । जिसका शाब्दिक अर्थ दिन और रात के समान होने से है । वर्तमान में यह समय लगभग 20 मार्च और 23 सितम्बर को आता है । जब मार्च में आता है तो इसे बसन्त विषुव कहते हैं तथा जब सितम्बर में आता है तो इसे शरद् विषुव कहते हैं ।

अदिति – पुनर्वसु नक्षत्र के अधिष्ठात्री देवता ।

उत्तरायण – जब सूर्य मकर से मिथुन राशि तक छ: राशियों में संचरण करता है तब उत्तरायण होता है ।

दक्षिणायण – जब सूर्य कर्क से लेकर धनु राशि तक छ: राशियों में रहता है तब दक्षिणायण होता है ।

4.7 अभ्यास प्रश्न

1. तिलक जी के संक्षिप्त जीवन परिचय पर प्रकाश डालिये ।
2. तिलक जी के कृतित्व को व्याख्यायित कीजिये ।

3. तिलक जी द्वारा प्रतिपादित वैदिककाल की ज्योतिषीय अवधारणा की व्याख्या कीजिये।
4. तिलक जी के ज्योतिषीय सिद्धान्त को विस्तार से प्रकाशित कीजिये।

4.8 उपयोगी पुस्तकें

1. वेदकाल का निर्णय, लेखक- डॉ. सूर्यकान्त झा,प्रकाशक- चौखम्भा विद्या भवन, वाराणसी, 2013।
2. भारतीय ज्योतिष, मूल लेखक– शंकर बालकृष्ण दीक्षित, अनुवादक- झारखंडी शिवनाथ, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, 1990।
3. भारतीय ज्योतिष, नेमिचन्द शास्त्री,भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, दिल्ली, 2014।
4. भारतीय ज्योतिष का इतिहास, लेखक- गोरख प्रसाद, प्रकाशन ब्यूरो,उत्तर प्रदेश सरकार, लखनऊ, 1956।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY